सारथी – ज़रूरतमंद कलाकारों के मददगार

दोस्तों,

14 अगस्त 1988 को स्व0 कमला देवी चट्टोपाध्याय जी ने हमारे बुनकरों द्वारा बनाया गया तिरंगा हम सभी मित्रों—बुनकर, दस्तकार, संगीतकार और लोक–कलाकारों की सहकारी समितियों की नई पीढ़ी को सौंपा था। उस दिन से आज तक हम हर वर्ष एक ख़ास विषय लेकर स्वतन्त्रता दिवस मनाते आये हैं। इस वर्ष का विषय है.....

जियो!—बाज़ार में हुनर की आज़ादी

जियो! आम तौर पर गली कूचों में इस्तेमाल होने वाला शब्द, जिसमें जीत की महक, अपनेपन की मिठास और उपज की प्रेरणा है..... **जियो!** लिखने में छोटा, सुनने और कहने में उत्साह भरा! '**जियो** और जीने दो', 'सर उठा के **जियो**', '**जियो** हज़ारों साल'। साहिर लुधियानवी का लिखा गीत तो शायद हम कलाकारों के लिए ही है :

न मुँह छुपा के **जियो**, न सर झुका के **जियो**,
ग़मों का दौर भी आए, तो मुस्कुरा के **जियो**।

जियो ! – मेरी उस सोच का हिस्सा, जिसे मैं हमेशा हुनरमंदो के आर्थिक लाभ प्राप्ति में साकार करना चाहता था। यह एक ऐसा विचार है जिसके माध्यम से एक आकर्षक नए सांस्कृतिक उद्योग का गठन किया जा रहा है। आज के विश्व बाज़ार में एक पहचान पैदा करना ज़रुरी है। बेनेटोन (Benetton), कोका कोला (Coca-Cola) जैसे विदेशी और वीकेन्डर (Weekender), प्रोवोग (Provogue) जैसे देसी ब्रांड ने युवा पीढ़ी को आज और कल के अपने ब्रांड की अपनी ख़रीददारी की होड़ में जोड़ लिया है। खादी, ग्राम शिल्प, सरस जैसे छोटे बर्ग के लिए बनाये गये सरकारी ब्रांड सिर्फ औपचारिक ही बनकर रह गये। वित्त मंत्रालय के नये नियमों के मुताबिक सेवा, उर्मूल, रंगसूत्र जैसे NGO's को भी अपनी व्यवसायिक कम्पनी बनानी पड़ी। परन्तु ब्रांड इक्विटी और पहचान किसी की भी नही बनी है। कला और सांस्कृतिक विरासत को प्रदर्शित करने के लिए असल में एक शानदार ब्रांड **"जियो"** बना कर इसे व्यवहार में लाने की कार्यवाही शुरु हो गई है। **जियो** राष्ट्रीय स्तर पर पहली कम्पनी होगी जिसमें 70 प्रतिशत शेयरहोल्डर (मालिक) गरीब पर हुनरमंद ग्रामीण लोग हैं। इस परियोजना का गठन विश्व बैंक और जापान सामाजिक विकास कोष के सहयोग से किया गया है।

जियो! 21वीं शताब्दी में एक अनोखे स्वदेशी ब्राड के रूप में कायम किया गया है। इसका सन्देश है : "विश्वास – खरीददारी – अपनापन"। यह अपनी तरह की एक अलग कम्पनी है जिसने पहचान बनाने वाली कला के हर पहलू (नवरत्नों) को छुआ है..... जिसमें कुटीर उद्योग, पाक कलाएँ, साहित्य, शिल्प, संगीत (दोनों लोक व शास्त्रीय स्तर पर), ललित कलाएँ, और हर्बल औषधियां इत्यादि भी जुड़ी हैं। इसके अर्न्तगत मार्केट आदि का प्रशिक्षण, नवीनतम डिजाइन, नई सेवाएँ एवं उत्पाद बनाए जाएंगे। इन उत्पादों को बनाने और मार्केट तक लाने की जिम्मेदारी जियो कम्पनी की होगी।

हर व्यक्ति, स्थान की अपनी विशेषता होती है। भारत की विविध पहचान हमारी कलाओं और संस्कृति से बनी है। नकल और पश्चिमीकरण से हम मोडर्न नही कहलाये जा सकते! आँकड़ो से पता चलता है कि सबसे ज्यादा पर्यटक यहाँ की जीवित कलाएं व अनुपम संस्कृति देखने आते हैं। लेकिन इन कला–रूपों के विकास के नाम पर जो पब्लिक व प्राईवेट सैक्टर कर रहे हैं वह बहुत कम है।

कला के बारे में बातचीत तो होती रहती है पर कला को जीवित रखने वाले कलाकार के बारे में प्रसंगवश कभी–कभार ही उल्लेख हो पाता है। एक बात मुझे बराबर कचोटती रही है कि आज हम भले ही हुनर व संस्कृति के नाम पर बढ़–चढ़कर बातें करते रहें लेकिन पारम्परिक कला से जुड़े कलाकारों के बच्चे खुद हुनर से अलग हो रहे हैं, क्योंकि पहचान मिलती नहीं दिखती। प्रोत्साहन और मदद की कमी के कारण नई पीढ़ी अपने काम के प्रति बेरूखी दिखा रही है। और ऐसा क्यों न हो, आज की भागती–दौड़ती ज़िन्दगी में मुश्किल, कम लाभ व कम सम्मान वाले व्यवसाय भला क्यों अपनायें? अपने युवाओं को पढ़ने–पढ़ाने के साथ–साथ पुश्तैनी काम को सीखने और करने की सुविधा औपचारिक एवं अनौपचारिक (Formal & Informal) शिक्षा प्रणाली से जोड़नी ज़रुरी है। परम्परागत कलाओं से उपलब्ध मानव संसाधन (Human Resource) में जो शक्ति है उसका विकल्प ढूँढना बेकार है।

विडम्बना ऐसी है, कि आज के मनोरंजन युग में हमें अपनी लोक कलायें झटपट कलाकारी देखने–दिखाने, जीतने–हराने की होड़ में फीकी लगने लगी हैं। टी वी ने परम्परागत कलाओं के प्रति रुचि तो बढ़ाई है लेकिन अब दरअसल रातो रात प्रसिद्ध होने की दोड़ में कलाओं को गहराई से समझ पाने की हमारी क्षमता कमज़ोर हो गई है। कला और जजमानो के बीच दूरियाँ भी बढ़ी हैं। कितने बच्चों ने कठपुतली को छू कर महसूस किया होगा एवं कितनो को सरोद और सितार में फर्क पता होगा? हम में रसिक गुणग्राहकता व सृजनात्मकता की पहचान लुप्त हो रही है।

तीन साल पहले जब मैं सांस्कृतिक एवं सृजनात्मक उद्योग, योजना आयोग, भारत सरकार का उपाध्यक्ष था तब मैने सृजनात्मक और सांस्कृतिक उद्योग के बारे में अपनी बात रखने सहित 'बौद्धिक सम्पदा कानून' (Intellectual Property Rights) के बारे में ठोस प्रयास रखे थे। हिन्दुस्तान की परम्परायें शुरु से ही ज्ञानात्मक अर्थव्यवस्था का मुख्य भाग रही हैं।

मैंने अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी थी, जिसमें इस बात पर जोर दिया था कि सृजनात्मक और सांस्कृतिक उद्योग देश की आय और रोज़गार का प्राथमिक ज़रिया हो सकते हैं। इस व्यावसायिक खण्ड में एक बेहतरीन राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय उद्योग बनने की क्षमता है, क्योंकि यह दुनिया में सबसे तेज़ी से बढ़ने वाले क्षेत्रों में से एक है। बहुत सारे देशों ने तो इसके अलग विभाग और मंत्रालय बना कर काम भी शुरु कर दिया है। परन्तु सरकार से मुझे जो उम्मीदें थीं वे पूरी नही हुईं। रिपोर्ट को शायद ही किसी ने पढ़ा तो क्या देखा भी होगा।

लगता है सरकार के अर्थशास्त्रियों का ध्यान बार–बार इस ओर दिलाना ज़रुरी है कि भारत में 45–48 प्रतिशत लोग इस क्षेत्र से जुड़े हैं। हुनर से जुड़े लाखों लोग बेरोज़गार हो रहे हैं, शेष इसकी कगार पर है। कृषि और बड़े उद्योगों में भी मशीनीकरण की वजह से बहुत तेज़ी से रोज़गार कट रहे हैं। अगर यही हाल रहा तो काम / हुनर का भविष्य क्या होगा ?

जरा सोचिये, सरकार की रोज़गार गारन्टी योजना के तहत एक परिवार पर लगभग 10,000 रूपये वार्षिक लागत आती है। मान लीजिये अगर कलाकारी से जुड़े 50 लाख लोग बेरोज़गार हो जायें तो इनको इस योजना का फ़ायदा देने मे तकरीबन 50 अरब रूपये खर्च होंगे। जबकी इनके विकास पर होने वाले सरकारी महकमों के बजट इससे कई गुना कम है। और दिये जाने वाले काम का न तो इनके हुनर से कोई वास्ता होगा और न ही ज्यादा टिकाऊ सिद्ध हो पाएगा। यह बात विचारणीय है कि सरकार ने तकरीबन 39,100 करोड़ रूपये रोज़गार गारंटी योजना के लिए रखे हैं यानि के वे इन्तज़ार कर रहे है कि कब लोग बेरोज़गार होंगे और इस पैसे का इस्तेमाल होगा!! आसान शब्दों में..... कि आग बुझाने के लिए 100 रूपये, पर! रोकथाम के लिए 10 रूपये भी नही!

फिर भी मेरा एक अटूट विश्वास है कि यदि आप लोग नई मार्केट के बारे में जागरुक हो जायें और अपने हक़ को पहचाने तब शायद बदलाव की शुरुआत होगी।

अपनी इसी भूली–बिखरी पहचान को राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित करने के लिए हमें खुद विशेष समूह बनाने होंगे, नये सिरे से प्रबन्ध करने होगें जो हमारी ज्ञानात्मक सम्पत्ति को सुरक्षित रखने में सहायता, मार्केट उपलब्ध कराने के मार्ग को आसान और कलाकारों की पहुँच तक बना सकें।

दरअसल, सरकार को जियो! जैसी परियोजना के प्रचार प्रसार के बजट में मदद करनी चाहिए, क्योंकि कुटीर उद्योग अपने उत्पादन के प्रचार के लिए बड़ी कम्पनियों से मुकाबला नही कर सकता। कहना न होगा कि प्रचार माध्यमों से ही छोटे उद्योग, कलाएँ और सेवाओं के बारे में लोगों को जानकारी मिलती है और उत्पाद (Product) ठीक हो तो उसको बिकने में मदद मिलती हैं।

शुरू से मेरी इच्छा रही है कि मैं जो भी परियोजना कलाकारों के लिए बनाऊँ उसमें मालिकाना हक उन्हीं का हो। सरकार के आला अफसरों ने कितनी बार कहा कि ये सारी योजनाएँ मै अपने या अपनी निजी संस्थाओं के नाम पर ले लूँ लेकिन मैंने उनकी बातो को सिरे से नकार दिया। मैं ये हरगिज़ नही चाहता कि कलाकारों और उनकी कलाओं के बीच में

एक और बिचौलिया संस्था या व्यक्ति आये। परन्तु यही बात मेरी असफलता का कारण बनी और आनन्दग्राम एवं नेहरू कला कुँज परियोजनाएँ पीछे धकेल दी गईं। सही मायने में सांस्कृतिक उद्योग की यह रहवासी परिकल्पना ही कमजोर कलाकार वर्ग को अपने पैरों पर खड़ा कर सकती है, और यही बात कई लागों को नही समझ आती।

लेकिन हम भी बहते पानी की तरह हैं, अपना रास्ता ढूँढ ही लेते है। हम सब के लिए **जियो!** एक पहल है, इस समस्या से निपटने के लिए। आखिर कब तक हम जमीन और सरकारी आस में जीते रहेंगे? इस बार कामयाबी हमारे हाथ है क्योंकि इसमें सरकार की हिस्सेदारी सीमित है।

जियो का मुख्य उद्देश्य कुशल दस्तकारो एवं कलाकारों को विकास के द्वारा सशक्त करना, पारम्परिक कलाओं को पुनः निर्मित करने के उद्देश्य से उन्हें दृढ़ करना और वैकल्पिक जीवनशैली की रचना करना है। 'कालेज फीस कलेक्शन' (College Fees Collection) बिहार के मुज़फ्फरपुर के इलाके में इस परियोजना का एक हिस्सा है जिसके तहत लड़कियों को सुजनी कला की ट्रैनिंग दे कर **जियो** कम्पनी मे हिस्सेदारी दी जायेगी। प्राथमिकता उन लड़कियों को दी जायेगी जो आगे पढ़ना चाहती है लेकिन पढाई का खर्चा उठाने में असमर्थ है, जिससे परमपरागत हुनर भी बचा रहे और शिक्षा भी पूरी हो जाये।

विश्व में बदलती बाज़ार की प्रवृतियों तथा खरीददारों की बदलती मांगों को ध्यान में रखते हुए हमारा यह अटूट प्रयास है कि सभी दस्तकार एवं कलाकार न केवल इन चुनौतियों का सीधा सामना कर सकें बल्कि स्वयं को सार्थक तरह से सिद्ध भी कर सकें। उदाहरण के लिए इलक्ट्रौनिक मास मीडिया के नये माध्यमों जैसे "एनीमेशन एवं डिजिटलीकरण" से पारम्परिक चित्रकारों को परिचित कराया जा रहा है। यह सिखावन उन्हें नयी तकनीक का ज्ञान देने के साथ ही सफलता के नए द्वार भी खोलेगी।

'जियो!–सड़क नाश्ता' के तहत देश भर में बस अड्डों, रेलवे स्टेशन, चौक आदि पर बिकने वाले स्थानीय खाने की समीक्षा की जा रही है। भोजन जो ताज़ा होने के साथ–साथ स्वास्थ्य के लिए लाभदायक हों, जो साफ सफाई के साथ सही ढंग से पेश किया जाये, जिससे बाहर से आने वाले लोग भी इसका लुत्फ़ सस्ते में उठा सकें। शुरुआत आन्ध्र प्रदेश के गुन्टूर क्षेत्र से की जा रही है।

देश के क्षेत्रीय (स्थानीय) ज्ञान को खास तौर पर आदिवासी लोगों के बिखरे व लुप्त होती **तकनीकों** का इस्तेमाल कर के कुछ फायदेमंद चीज़ें बाज़ार के हिसाब से तैयार कर आम **जनता तक पहुँचायी** जायगीं। मसलन छत्तीसगढ़ में जड़ी–बूटियों से मच्छर भगाने वाली धूप **सामग्री बनाने** पर शोध हो रहा हैं। यह उत्पाद **'जियो! हरबल'** ब्रांड के तहत बिकेंगे।

'जियो! – ताजमॉल' के अन्तर्गत आगरा में लोक व शास्त्रीय कलाओं को मिश्रित कर नये ढंग **से प्रस्तुत** किया गया: इसमें कलाओं का असली रूप भी बचा रहा और अमेरिका व यूरोप की **संस्थाओं** को इतना पसंद आया कि 2011–2012 मे एक महान महोत्सव की बात फिर शुरु हो गई है।

देश भर की हथकरघा (Handloom) से बनी, खत्म होती साड़ियां जैसे कि धर्मावरम, मंगलागिरी, वेंकटगिरी, उपाड़ा, गडवाल, कोथक कोटा, बसवनबीगा की 52 बूटी साड़ी आदि को **'जियो– 1001 साड़ियों'** के तहत पुनःजीवित करने का अभियान भी शुरु हो गया है।

ऐसा बिल्कुल नही है कि सभी कलाकारों को इसमें फायदा होगा। इसका लाभ उन्ही कलाकारों को मिलेगा जो अपने हुनर के प्रति इमानदार हैं, मेहनती हैं और जिनमें कुछ करने की चाह है और जो **जियो** के सांझे सफर में आगे बढ़ना चाहते हैं।

आइए, जुड़ते हैं उस अभियान से, जिसके नारे से हम एक नई पहचान कायम करें............ विश्वास, खरीददारी और अपनापन। यह अभियान दिल्ली, आन्ध्र–प्रदेश और बिहार से शुरू हुआ है, उम्मीद है कि देश के बाकी हिस्सों में भी जल्द ही पहुँच सकेगा। और लगभग सभी हुनरमन्द **जियो** कम्पनी के साथ जुड़ सकेंगे ताकि भारत रचनात्मक ढंग से तरक्की का एक आधुनिक ब्रांड दुनिया को दे सकें।

पिछले दिनों जब मैं कलाकारों से मिलने बिहार के देहाती इलाके में घूम रहा था तो एक बुजुर्ग महिला मेरे पास आई और बोली "साहब, सब बोल रहे हैं कि कलाकारों की कम्पनी खुल रही है, मैं अकेली हूँ नहर पर मिट्टी ढोकर गुजारा करती हूँ", बातचीत करने पर पता चला कि उसे महीन सूत कातना, कढ़ाई, बुनाई, सिलाई, टोकरी बनाना तो आता है लेकिन अपने हुनर की पहचान नही है। उसके जैसे कितने ही लोगों का हुनर बेकार या लुप्त हो रहा है?हम देश को इतना बेहुनर क्यों बना रहे हैं?

मैं फिर से यह बात दोहराना चाहता हूँ कि मैं उन सभी के साथ हूँ जो अपनी मदद खुद करना चाहते हैं।

आइए, आज प्रार्थना करें कि हमारा यह नया अभियान कामयाब हो।

दिखा दो
कुछ करके।
हुनरमंद हो,
जियो जी भरके।

जय हिन्द

राजीव सेठी

(राजीव सेठी)

Live it! Jiyo!* Jiyo!
BELIEVE... BUY... BELONG
Map your world from where you are

* *Mahatma Gandhi's handwriting - re-configured*